दैनिक भास्कर

Date:16-11-23

श्रम के नए आंकड़े भावी खतरे का संकेत

संपादकीय

देश के एक सम्मानित उद्योगपति ने पिछले दिनों कहा कि भारत को महाशक्ति बनाने के लिए युवाओं को हर हफ्ते 70 घंटे काम करना होगा। इसके पक्ष और विपक्ष में बहुत बातें हो रही हैं, लेकिन एनएसएसओ ताजा आंकड़े बताते हैं कि देश में पहली बार विनिर्माण से ज्यादा श्रमिक अनौपचारिक क्षेत्र के ट्रेड, होटल और रेस्तरां में काम कर रहे हैं और इनकी आय मात्र पेट पालने तक ही है। फैक्ट्री, कल-कारखानों में रोजगार के अवसर घटने से मजदूर अब या तो कृषि में वापस लौट गए हैं या फिर दुकानों, ढाबों, सामान पहुंचाने वाले नए उपक्रमों (गिग वर्कर्स) के रूप में काम करके महज कमा खा रहे हैं। श्रमिक-बहुल भारत में ज्यादा लोगों को काम देना होगा। कृषि में अतिरिक्त श्रमिकों का बढ़ना नकारात्मक उत्पादकता पैदा कर रहा है। यानी गांव में बैठा हर युवा विपन्न ग्रामीण अर्थव्यवस्था पर बोझ बन गया है। ताजा आंकड़े बता रहे हैं कि सरकारें आर्थिक नीति बदलें ताकि उद्योगों, खासकर एमएसएमई सेक्टर में मजबूती आए। यह सेक्टर करीब 12 करोड़ लोगों को रोजगार देता है। एक उदाहरण लें। देश के दस कृषि-आधारित राज्यों में से एक बिहार में आज भी शहरीकरण मात्र 11% है। नतीजतन इस राज्य में मैन्युफैक्चरिंग में देश में सबसे कम 5.7% रोजगार है जबकि गुजरात में यह सेक्टर सर्वाधिक 23.71% रोजगार देता है। कृषि में सर्वाधिक 62.61% रोजगार छत्तीसगढ़ में है । इसका मतलब यह है कि वन क्षेत्र से आच्छादित इस राज्य में रोजगार के अन्य उपक्रम लगाने होंगे। भारत में मैन्युफैक्चरिंग में रोजगार का लगातार कम होना आने वाले उस आर्थिक खतरे का संकेत है, जिसमें श्रमिकों की स्थिति बदतर होती जाएगी क्योंकि कृषि में इनकी उत्पादकता नकारात्मक हो चुकी है और सेवा क्षेत्र में, खासकर औपचारिक सेवा के उपक्रमों में जिस कौशल की जरूरत है, वह अभी युवाओं को हासिल नहीं हो रहा है।

बिज़नेस स्टैंडर्ड

Date:16-11-23

स्कूलों को बेहतर बनाएं

संपादकीय

भारत में करीब 15 लाख स्कूलों का भारी भरकम नेटवर्क है जिसमें करीब 26 करोड़ छात्र-छात्राएं पंजीकृत हैं। शिक्षा का अधिकार, सर्व शिक्षा अभियान और मध्याह्न भोजन जैसी सरकारी पहलों ने स्कूली शिक्षा तक पहुंच में महत्त्वपूर्ण सुधार किया है। बहरहाल, अभी भी बड़े पैमाने पर अंत:संबंधित चुनौतियां मौजूद हैं जिनमें शिक्षण नतीजे, शिक्षकों की रिक्तियां, संचालन से लेकर संगठनात्मक मुद्दे शामिल हैं। इस संदर्भ में नीति आयोग ने तीन प्रदेशों झारखंड, मध्य प्रदेश और ओडिशा में सस्टेनेबल ऐक्शन फॉर ट्रांसफॉर्मिंग ह्यूमन कैपिटल इन एजुकेशन (साथ-ई) के अंतर्गत जो काम किया है वह अन्य राज्यों को आगे की राह दिखा सकता है।

देश भर में छोटे सरकारी स्कूलों को तेजी से खोले जाने और प्रजनन दर में कमी ने इनमें से कुछ स्कूलों को अत्यधिक छोटे आकार का बना दिया है। बड़ी तादाद में छोटे-छोटे स्कूलों का संचालन न केवल महंगा पड़ता है बल्कि शैक्षणिक नतीजों पर भी इसका असर होता है क्योंकि शिक्षकों की उपलब्धता कम होती है। उदाहरण के लिए झारखंड में 4,380 स्कूलों का विलय किया गया जिससे करीब 400 करोड़ रुपये की बचत हुई। नीति आयोग की परियोजना में साफ तौर पर इस बात पर जोर दिया गया है कि छोटे, कम पैमाने पर काम कर रहे और कम छात्र पंजीयन वाले स्कूलों का विलय किया जाए और शिक्षकों की समुचित व्यवस्था की जाए क्योंकि देश के स्कूली शिक्षा परिदृश्य में बदलाव लाने में उनकी अहम भूमिका है।

अकादमिक सुधार और स्कूली स्तर पर नवाचार तभी सफल हो सकते हैं जब व्यवस्थागत चुनौतियों का सामना संस्थागत और संचालन स्तर पर बदलावों के मिश्रण से किया जाए। इस सप्ताह जारी की गई परियोजना पर आधारित रिपोर्ट के अनुसार छोटे पैमाने पर काम कर रहे स्कूलों का विलय करने तथा आसपास के स्कूलों को उसमें मिलाने से बेहतर शैक्षणिक और प्रशासनिक नतीजे हासिल हुए हैं। एक बार एकीकरण हो जाने के बाद बड़े स्कूल न केवल स्कूलों का बड़ा आकार मुहैया कराते हैं बल्कि वहां शिक्षकों की भी समुचित व्यवस्था होती है और बुनियादी ढांचा भी बेहतर होता है। इसके अतिरिक्त इससे छात्रों की क्षमता बढ़ती है, वे एक कक्षा से दूसरी कक्षा में सहज ढंग से जाते हैं और एक साथ कई कक्षाओं को पढ़ाने की प्रक्रिया पर भी रोक लगती है। ज्यादा तादाद में छात्रों को एक बड़े साथी समूह का सहयोग मिलता है, इससे उनके ज्ञान में गहराई और विविधता आती है। इससे शैक्षणिक अनुशासन को बेहतर बनाने में मदद मिलती है। ये सारी बातें स्कूल के बेहतर प्रदर्शन, स्कूल छोड़ने वालों की तादाद में कमी और छात्रों के लिए बेहतर शिक्षण नतीजों से संबद्ध हैं। बेहतर निगरानी तथा संचालन भी स्कूलों के विलय से जुड़ा एक लाभ है।

साथ-ई परियोजना में शामिल तीन स्कूलों का अनुभव अन्य राज्यों को प्रोत्साहित कर सकता है कि वे इससे निकले कुछ सबकों को अपनाएं। इस दौरान आर्थिक व्यवहार्यता और स्थानीय समुदायों के बच्चों पर प्रभाव जैसे कारकों को भी ध्यान में रखना होगा। भारत की भौगोलिक आकृतियों में अंतर को देखते हुए तथा जनजातीय आबादी को ध्यान में रखते हुए इस बात को पूरी तवज्जो दी जानी चाहिए कि दूरदराज इलाकों में स्कूल तक पहुंच प्रभावित न हो और स्कूल छोड़ने वालों की संख्या बढ़ न जाए। लोगों के आवासीय इलाके के आसपास स्कूलों की उपस्थिति प्राथमिकता होनी चाहिए। खासतौर पर प्राथमिक शिक्षा के स्तर पर। झारखंड के खूंटी जिले की सफलता उल्लेखनीय है। जिला प्रशासन ने दूरदराज रहने वाले विद्यार्थियों के लिए परिवहन व्यवस्था की। छात्र अपने पुराने स्कूल पर एकत्रित होते और वहां से बस से नए विलय किए गए स्कूल तक पहुंचते। ज्यादा उम्र के छात्रों के लिए साइकिल के विकल्प पर भी विचार किया जा सकता है।

इसके अलावा नीति निर्माताओं को शिक्षण की गुणवत्ता और पाठ्यक्रम पर भी ध्यान देना चाहिए क्योंकि शैक्षणिक सबकों में सुधार की दृष्टि से वे भी महत्त्वपूर्ण हैं। सरकारी स्कूलों के पुनर्गठन के इर्दगिर्द बनने वाली कोई नीति सावधानीपूर्वक तैयार की जानी चाहिए। सरकारी स्कूलों में शिक्षण को बेहतर बनाए बिना भारत सतत विकास लक्ष्यों को हासिल नहीं कर सकेगा।

Live हिन्दुस्तान .com

Date:16-11-23

सेवाओं में चयन का सलीका सुधारिए

मोहन भंडारी, (लेखक रिटायर्ड लेफ्टिनेंट जनरल हैं)

विश्व में भारत संभवत अकेला ऐसा राष्ट्र है, जहां सरकारी सेवाओं में नियुक्ति देने वाले 30 से अधिक लोक सेवा आयोग हैं। संघ लोक सेवा आयोग के अलावा सभी राज्यों में राज्य लोक सेवा आयोग बने हुए हैं। इनका गठन 'गवर्नमेंट ऑफ इंडिया ऐक्ट-1935' के तहत हुआ था। इससे पूर्व 'ली कमीशन' की अनुशंसा के अनुरूप 1 अक्तूबर, 1926 को लोक सेवा आयोग का गठन हुआ था, जिसकी आज्ञा 'गवर्नमेंट ऑफ इंडिया ऐक्ट-1919' द्वारा दी गई थी।

इन लोक सेवा आयोगों का प्राथमिक उद्देश्य एक ऐसा पारदर्शी व योग्य प्रतिष्ठान बनाना है, जो सरकारी, पेशेवर और शासकीय सेवाओं के लिए काबिल व्यक्तियों का उनकी दक्षता के आधार पर चयन कर सके। इस पद्धति को साकार करने के लिए यह सुनिश्चित करना जरूरी है कि तमाम राष्ट्रीय या प्रादेशिक सेवाओं के लिए चयन किसी भी प्रकार के भ्रष्टाचार, राजनीति, भाई-भतीजावाद और बाहरी प्रभाव से मुक्त रहे।

आज एक राज्य के स्तर पर लगभग 70 प्रतिशत संसाधनों और साधन-संपत्ति का उपयोग सिर्फ स्टाफ, तनख्वाह और अनेक अन्य प्रशासनिक मदों पर होता है। यह उल्लेखनीय है कि राज्यों के मानव संसाधन हमारे राष्ट्र की बहुमूल्य संपत्ति हैं। संपूर्ण विश्व में आज भारत सबसे नौजवान राष्ट्र है, जिसकी लगभग 64 प्रतिशत जनसंख्या 35 साल से कम उम्र की है। यही वह समय है, जब इस नौजवान-वर्ग को निश्चित दिशा देकर हम अपने राष्ट्र को बुलंदी की ओर ले जा सकते हैं। यह भी याद रहे कि यह समीकरण सिर्फ एक पीढ़ी (25-30 साल तक) तक सीमित है। संघ और राज्यों के लोक सेवा आयोग इस आयु वर्ग के नौजवानों के भाग्य विधाता हैं। यह देखा गया है कि चयनित व्यक्ति प्रदेश-देश को अपनी सेवाएं देता है, इसलिए यह जरूरी है कि केंद्र/राज्य इन सेवा आयोगों को ज्यादा महत्व दें। राष्ट्रीय आर्थिक सूचकांक के लगातार घटने/बढ़ने की स्थिति में यह और भी आवश्यक हो जाता है कि चयन-प्रक्रिया बेदाग व निष्पक्ष रहे। फिलहाल, विकल्प यही है कि हम या तो इस युवा वर्ग का सही उपयोग करके इसका लाभ उठाएं या फिर इस स्वर्णिम अवसर को हमेशा के लिए गंवा दें। निस्संदेह, दूसरी स्थिति सबके लिए विनाशपूर्ण होगी।

कोई शक नहीं कि बदलते परिवेश में सरकारी सेवाओं में बहुत बुनियादी परिवर्तन आए हैं। आज सूचना प्रौद्योगिकी, कृत्रिम बुद्धिमत्ता, विज्ञान और तकनीक, प्रबंध कौशल आदि में बड़े बदलाव आए हैं। संपूर्ण विश्व भूमंडलीय गांव बन चुका

है। नतीजतन, सरकारी सेवाओं और चयन-प्रक्रिया में आमूल-चूल बदलाव की जरूरत है, पर भारत के लोक सेवा आयोगों में इस विषय पर बहुत कम काम हुआ है। आज ब्रिटेन का सिविल सर्विस कमिशन महज छह प्रतिशत सिविल सर्विस नियुक्तियां करता है। कनाडा, दक्षिण अफ्रीका, यूरोप, ऑस्ट्रेलिया और अन्य प्रगतिशील राष्ट्रों में सरकारी सेवाओं का चयन विकेंद्रीकृत कर दिया गया है। विश्व के कई देशों में चयन का उत्तरदायित्व गैर-सरकारी प्रतिष्ठानों को दे दिया गया है। कुछ ने चयन-प्रक्रिया को मंत्रालयों व विभागों को सौंप दिया है। इस विकेंद्रीकरण से हर स्तर पर जिम्मेदारी बढ़ जाती है। मगर भारत में ऐसे उत्तरदायित्व की नितांत कमी है और यह किसी व्यक्ति विशेष की जिम्मेदारी नहीं है। यहां कई वजहों से हम आमूल-चूल बदलाव तो नहीं ला सकते, पर जंग खा चुकी नियुक्ति व्यवस्था को हर तरह से सुधारने और अच्छी नौकरी चाह रहे युवाओं की आकांक्षाओं के अनुरूप बनाने का प्रयत्न तो कर ही सकते हैं।

आज जब राष्ट्रमंडल के लगभग सभी सदस्य देश मूल भर्ती-प्रक्रिया को त्याग चुके हैं, तब भारत को भी अपने प्रशासनिक पदों की भर्ती-प्रक्रिया में आधुनिक बदलाव लाने पर विचार करना चाहिए। यूं कहें कि यूजीसी, आईआईटी जैसे विभिन्न संस्थानों से चयन-प्रक्रिया में मदद ली जाए। भारत जैसे विशाल राष्ट्र में, जहां नागरिक एवं प्रबंधन लोकाचार विश्व के अन्य राष्ट्रों से अलग है और जहां लोक सेवा आयोगों में कोई बदलाव संसद द्वारा ही किया जा सकता है, वहां कम से कम हम अपने परीक्षा-प्रारूपों को तो लोक सेवा की बदलती शैली के अनुरूप बना ही सकते हैं। हमें लिखित परीक्षाओं और साक्षात्कार के दौरान मनोविज्ञान संबंधी प्रश्नों को भी शामिल करना होगा, ताकि हम कुछ हद तक यह सुनिश्चित कर सकें कि उत्तीर्ण होने वाले अभ्यर्थी मानसिक रूप से अपने पदों की मर्यादा का ईमानदारी से पालन करेंगे। ऐसे युवाओं को सरकारी सेवाओं में बड़ी संख्या में लाना होगा, जो आम लोगों को शिकायत का कोई मौका नहीं देंगे और आम लोगों की सेवा को ही अपनी जिम्मेदारी मानेंगे।

आजादी के बाद, संघ और राज्यों के लोक सेवा आयोग कर्मठता व सुचारू रूप से अपने उत्तरदायित्वों के निर्वाह का प्रयत्न करते रहे हैं, पर राज्यों द्वारा दिए गए मानकों और निर्देशनों में बहुत कुछ सुधार शेष है। लोक सेवा आयोग अपना वार्षिक कैलेंडर और समय सारिणी तो बनाते हैं, लेकिन अमूमन ये औपचारिकता मात्र बनकर रह जाते हैं। अब भी लोक सेवा आयोगों पर बहुत विश्वास है, मगर यह भरोसा आकांक्षाओं के पूरा न होने पर धीरे-धीरे कम होता जा रहा है। इसलिए यह केंद्र व राज्य सरकारों की जिम्मेदारी है कि वे आयोग के लिए सदस्यों का चुनाव तार्किक आधार पर करें। यह दुर्भाग्य हैकि इनके अध्यक्षों और सदस्यों की नियुक्तियों का संविधान में वर्णन तो है, लेकिन उनके मानक, योग्यताओं व चयन पद्धति/प्रणाली के विषय में कोई भी निर्देश नहीं है। फलस्वरूप, राजनीतिकरण और नौकरशाही हावी है। अध्यक्षों व सदस्यों के चयन के लिए यह आवश्यक है कि सर्च कमेटियां बनाई जाएं, ताकि राजनीतिक प्रभाव से बचते हुए योग्यता के आधार पर चयन हो सके। आज सरकारें भी लोक सेवा आयोगों पर प्रतिकूल प्रभाव डालती हैं, क्योंकि इनका बजट वही देती हैं। याद रहे, लोक सेवा आयोग सरकारों के अनुबंध में नहीं हैं, वे स्वतंत्र चयनकर्ता हैं, जिसका स्पष्ट वर्णन संविधान में है। यह अपने आप में सबसे बड़ी कमजोरी है। दूसरी बड़ी कमजोरी यह है कि उच्च न्यायालयों से सर्वोच्च न्यायालय तक लोक सेवा आयोगों की चयन-प्रक्रिया, परीक्षाओं व परिणामों के विरुद्ध मुकदमों की भरमार है।

समय की पुकार है कि इन कमजोरियों पर पूरा ध्यान दिया जाए और उच्च स्तर पर विद्वान बुद्धिजीवियों का एक आयोग बने, ताकि संविधान में जरूरी संशोधन किया जा सके। याद रहे, भारत का सुशासन इन्हीं चयनित व्यक्तियों पर आधारित है, जो 30-35 वर्षों तक राष्ट्र व राज्यों को अपनी सेवाएं देते हैं।